***Rivista*, 2017, 1, 25-34**
Published Online: July 12, 2017 (http://inscribepublications.com/journal/rivista)
http://doi.org/10.26476/rivista.2017.01.25-34

नंदकिशोर आचार्य के काव्य का भाषिक और साहित्यिक वैशिष्ट्य : नई सदी के विशेष संदर्भ में

मुकेश कुमार शर्मा
शोधार्थी, हिंदी विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर, भारत 313001
Email: sharmamk1985@gmail.com

Received June 17, 2017; Revised July 7, 2017; Accepted July 11, 2017

सार

नंदकिशोर आचार्य का लेखन कर्म प्रारंभ से ही भाषिक प्रयोग में निरंतर प्रयोगधर्मी रहा है। भाषा प्रारम्भ से ही इनके आकर्षण का विषय रही है। श्रीआचार्य भारतीय मूल्यों के प्रति विश्वास रखते हुए भी उनमें युगीन परिस्थितियों के अनुरूप परिवर्तन करने के पक्षधर रहे हैं। साहित्य में भारतीय मूल्यों के साथ–साथ तकनिकी विकास के अनुरूप मनुष्यों के आगे बढ़ने से ही मानवीय मूल्यों की स्थापना की जा सकती है। लोकतंत्र की आधारभूमि (मूल शक्ति) प्रत्येक मनुष्य के स्वत्वाधिकारों की रक्षा करना है। भाषा मनुष्यों को तोड़ती नहीं जोड़ती है इसी धारणा के आधार पर वह अपने सरोकारों को पूर्ण कर पाती है।

नई सदी की काव्य कृतियों को आधार बनाकर आचार्य के भाषिक और साहित्यिक वैशिष्ट्य को रेखांकित करने का प्रयास किया गया है जिसमें – मुक्तक छंद, शाब्दिक-विधान में नवीन प्रयोग, उर्दू के शेरों व महाभारत के श्लोक एवं कविता को संदर्भ में दे कर कविता लेखन –'हाज़िर जवाबी शैली में', परसर्गों का शब्दों से अलग प्रयोग, प्रयोगधर्मिता, ईश्वर संबंधी धारणाओं को भारतीय अद्वेत दर्शन और अस्तित्ववादी दर्शन से भी प्रस्तुत करने का कार्य किया गया है। समकालीन कविता कहती कम और संकेत अधिक करती है इसे इनकी कविताओं में प्रतिफलित होता हुआ अनुभूत किया जा सकता है जो एक साथ एक से अधिक भावों और अनुभूतियों को संवेदना के धरातल पर साकार करती हैं। इनका काव्य भारतीय जीवन मूल्यों से जुड़कर निरंतर सामाजिक और साहित्यिक मूल्यों को आगे बढ़ा रहा है। संवेदनाओं का सूक्ष्मांकन इनकी कविताओं में विभिन्न दार्शनिक, ऐतिहासिक,

वैयक्तिक एवं मनोवैज्ञानिक पृष्ठ भूमियों में सांगोपांग रूप में वर्णित हुआ है।

संकेतशब्द - प्रयोगधर्मिता, बांसुरी : मोरपाँख, 'आत्म रव....! का अद्वितीय कवि', मानवीय मूल्य, संवेदनात्मक अनुभूतियों एवं मनोभूमियों की साकार अभिव्यक्ति, भाषिक और साहित्यिक वैशिष्ट्य, ईश्वर एवं मृत्यु से टकराहट, मन के अंध गह्वर में प्रवेश।

1. प्रस्तावना

श्रीप्रकाश मिश्र द्वारा 'जीवन एवं पंचतत्त्वों की लय के कवि' से विभूषित एवं अज्ञेय द्वारा संपादित 'चौथा सप्तक' (1979) में राजस्थान के इकलौते कवि नंदकिशोर आचार्य के लिए भाषा ही लेखन कर्म का प्रथम व प्रमुख आकर्षण रही है। भाषाई प्रयोग आचार्य जी के साहित्यिक लेखन में महत्ती भूमिका अदा करते हैं। वह चाहे कविता हो, नाटक हो, आलोचना हो, लेख या विभिन्न विचार गोष्ठियों एवं संगोष्ठियों में आपकी भाषागत प्रयोगशीलता अजस्र रूप में प्रवाहमान रही है। शब्दों का भावानुरूप एवं समुचित प्रयोग, उर्दू के शब्दों का मुकम्मल अनुप्रयोग आपकी कविताओं में निरन्तर प्रतिफलित होता रहा है। एक खास किस्म का प्रयोग भी आपकी कविताओं में देखने को मिलता है जिसमें उर्दू के शेरों का विशेषकर संदर्भ के रूप में प्रयोग करके उन शेरों पर अपनी संवेदनात्मक अनुभूतियों एवं मनोभूमि को साकार अभिव्यक्ति देते हुए शेरों के पार जाकर आपनें अपनी अनुभूतियों को अपने ही तरीके से अभिव्यक्त किया है जो हिंदी में एक अनूठा प्रयोग हैं। हिंदी में आपके अतिरिक्त अशोक वाजपेयी की कविताओं में भी इस प्रकार का प्रयोग मिलता है।

भाषा की मूल प्रवृतियों के संबंध में विचार करते हुए नंदकिशोर आचार्य ने कहा हैं कि –"भाषा मनुष्य के अकेलेपन को तोड़ने का काम करती है। यह मनुष्य को मनुष्य से जोड़ती है। अगर भाषा अपने इस धर्म को भूल जाये या उसे तोड़ने लगे तो वह भाषा ही नहीं रहेगी। विभाजन के लिए भाषा का इस्तेमाल करना भाषा के मूल धर्म के विपरीत है। भाषिक समूह का जोड़ने के बजाय तोड़ने का काम ही दरअसल फासीवाद है [1]।"

आपकी ख्याति एक प्रतिष्ठित कवि, नाटककार, आलोचक, चिंतक एवं गांधीवादी दर्शन के एक महत्त्वपूर्ण अध्येता के रूप में रही हैं। आपके लेखन में भाषिक प्रयोगशीलता का समावेश मिलता है जिसमें अज्ञेय के समान मनुष्य के मन में पाई जाने वाली विभिन्न मनोभूमियों को साकार करते हुए लेखन कर्म में निरन्तर लीन रहे हैं। जिसमें - रेत, प्रकृति प्रेम, लौकिक संस्कृति एवं इतिहास के विविध पहलुओं इत्यादि को संवेदना के धरातल पर साकार करते हुए सफल काव्य लेखन किया है। प्रकृति के साथ-साथ मनुष्य के विभिन्न भावों को इस प्रकार से अभिव्यक्ति दी गई है कि वह न केवल प्रकृति की अनुभूति हमें करवाती है बल्कि वह हमारे अंतःकरण से स्वतः

स्फुर्थ-सी लगती है। आपके कविता लेखन की बात की जाए तो प्रत्येक कविता के अंत में उसके लेखन की दिनांक, माह, वर्ष आदि अंकित मिलते हैं जिससे उस समय के देश-काल-वातावरण से उत्पन्न आपकी संवेदना के विविध आयामों को देखने में प्रामणिकता आती है जो युग सापेक्ष परिस्थितियों से हमें अवगत कराने में सफल रही । इनके सम्पूर्ण रचना संसार का अध्ययन करने के पश्चात् यह अनुभव होता है कि रचना लोक में- "जब साहित्यकार अनुभूतियों का चित्र ही नहीं, उससे आगे बढ़कर अनुभूतियों का यथार्थ (ऑब्जेक्टिव) वस्तु जगत के साथ कार्य-कारण संबंध भी व्यक्त कर देता है, तभी उसे वह तटस्थता प्राप्त होती है और उसकी रचना को वह शक्ति जो परिवर्तन को संभव बनाती है [2]।"

आपकी काव्य यात्रा 'जल हैं जहाँ' (1980) से प्रारंभ होकर 'वह एक समुद्र था' (1982), 'आती है जैसे मृत्यु' (1990), 'कविता में नहीं है जो' (1995), 'अन्य होते हुए' (2007), 'चांद आकाश गाता है' (2008), 'केवल एक पत्ती ने' (2011), 'इतनी शक्लों में अदृश्य' (2012), 'छीलते हुए अपने को' (2013), 'मुरझाने को खिलाते हुए' (2014), 'आकाश भटका हुआ' (2015) और नवीनतम प्रकाशित 'हवा की मंज़िल नहीं कोई' (2016) तक अनवरत रूप से अद्यतन जारी है। सभी कविता संग्रहों कि महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि उनके विभाजन तीन खंडों में अलग-अलग शीर्षकों से किए गए है।

कविता चयन के तीन संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं जिनमें-'बारिश के खंडहर' (1996), 'रेत-राग' (2002), 'कवि का कोई घर नहीं होता' (2009) में इस कविता चयन का प्रकाशन वाक्, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली से हुआ है। 'पचास कविताएं : नयी सदी के लिए चयन' का प्रकाशन (2011) वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली से हुआ जिसमें 1967 से लेकर 2009 के मध्य रचित कविताओं का चयन किया गया है। जिसमें इनकी सबसे प्रिय कविता 'बांसुरी : मोरपाँख' को प्रथम स्थान दिया गया है।

जहाँ तक इनके कविता संग्रहों पर प्राप्त होने वाले पुरस्कारों की बात की जाए तो 'वह एक समुद्र था' (1982) नामक कविता संग्रह पर वर्ष 1986-87 के लिए राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर का सर्वोच्च 'मीरा सम्मान' प्राप्त हुआ है। 'रेत-राग' कविता चयन के लिए वर्ष 2003-04 का एफ. आई. पी. अवार्ड प्राप्त हुआ, प्रयास संस्थान, चुरु द्वारा वर्ष 2016 के डॉ. घासीराम वर्मा पुरस्कार आपके कविता-संग्रह 'आकाश भटका हुआ'(2015) को प्रदान किया गया है जो आपकी काव्यात्मक सृजनधर्मिता के वैशिष्ट्य को उजागर करता है।

2. नंदकिशोर आचार्य के काव्य का भाषिक और साहित्यिक वैशिष्ट्य

प्रत्येक कवि का पठन-पाठन कर्म उसके लेखन कार्य में विभिन्न रूपों में प्रतिफलित होता रहता है। आचार्य के लेखन कर्म की बात की जाए तो उसमें भाषागत

विविध प्रयोग एवं साहित्यिक वैशिष्ट्य दिखाई देता हैं जिन्हें हम निम्न बिंदुओं के आधार पर समझ सकते हैं जो इस प्रकार हैं –

2.1. मुक्तक छंद का प्रयोग

मुक्तक छंद की आत्मा लय होती है। हिन्दी साहित्य में 'निराला' को इसका प्रस्तोता कहा जाता है। आचार्य द्वारा लिखी गई छोटी- छोटी कविताओं ने संवेदना के सूक्ष्म तत्त्वों को न केवल साकार किया अपितु प्रकृति ही नहीं जड़ एवं चेतन वस्तुओं में भी मानवीय राग की अनुभूतियों को भी साकार अभिव्यक्ति दी है। 'रेत राग', 'वह एक समुद्र था', 'बारिश के खंडहर' आदि में मानवीय राग प्रस्तुत हुआ है। जो अज्ञेय जी द्वारा दी गई उपमा 'मरुस्थल के सौंदर्य के अद्वितीय कवि' को साकार करती हैं। जिस परिवेश में इनका बचपन गुजरा, बड़े हुए और देश के विभिन्न शहरों एवं राज्यों में भ्रमण करने के बावजूद इनका अनुराग अपनी मातृभूमि के प्रति निरंतर बना रहा जो इन्हें बार-बार अपने शहर की ओर जाने के लिए या कहें अपनी जड़ों से जुड़े रहने का अहसास ही इन्हें अपने काव्य लेखन के लिए निरंतर प्रेरित करता रहा है। जो विविध रूपों में साकार अभिव्यक्ति का रूप धारण करके प्रस्तुत होता रहा है। "…. बावली आत्मा तपते मरुस्थल के अछोर तक जाती है। लोग इस बावलिया को नहीं देखते, जो निर्जल मरुस्थल से पानी खींच कर उगता हरा-भरा होता है। रेगिस्तान भी वीराने में फूल और कविता सम्भव बनाता है- बावलिया से, बावले कवि से रेगिस्तान जब फूटता है [3]।" कवि के बावलेपन को 'कहीं जल है, माँ !' में प्रतिफलित होते अनुभव कर सकते है कि-

"नहीं, तपती रेत ही तू नहीं है
केवल तुझ में कहीं जल है, माँ !
कहीं गहरे जल/सिर्फ़ मेरे लिए संचित ।
यह जल किस तरह तृषा से उपजता है, माँ ?
ख़ुद को जला कर भी/सींचती मुझ को -
मैं जो रोहिड़ा ही सही/तेरा पूत हूँ ! [4]"

'झरना' कविता की पंक्तियां हैं कि –

'मेरे सीने में/एक झरना है/बस
इसी बात का तो/मरना है ! (1982)'

"अज्ञेय जी की परंपराओं में यह 'लैंडस्केप' जितना आंतरिक है, उतना ही बाह्य अर्थों में सूक्ष्म व संश्लिष्ट भी। झरनें का बिंब यहाँ पूरी अर्थवत्ता के साथ मौज़ूद है। सिर्फ इसी एक शब्द ने इन पंक्तियों में प्रकृति और मनुष्य की आत्यंतिक चेतना का अंतर्विलयन कर दिया है। आचार्य जी अपने छोटे से कथन में भी पूरा समाज दर्शन लेकर उतरते हैं। कविता में घटने वाले सत्य को संभावित यथार्थ से जोड़कर देखने की समझ के चलते एक कवि अपने समय को बड़ी उदारता व समग्रता से रूपायित कर सकता है [5]।"

2.2. शब्द-विधान

आचार्य के कविता संग्रहों का अध्ययन करने के पश्चात यह अनुभव होता है कि इनके काव्य लेखन पर उर्दू के शायर ग़ालिब का विशेष प्रभाव और इसके अतिरिक्त मुक्तिबोध, रमेशचंद्र शाह, शमशेर बहादुर सिंह आदि के भाषिक विधान के विविध भाषाई रूप हमें देखने को मिलते हैं जिसमें उर्दू , खड़ी बोली हिंदी, राजस्थानी तथा अरबी-फारसी के शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। बचपन से ही उर्दू साहित्य में रुचि रखने से आपकी कविताओं में भी इनका प्रभाव दृष्टव्य है। आपके लगभग सभी कविता संग्रह में उर्दू शब्दावली का प्रयोग मिलता है लेकिन यह प्रयोग हमें कहीं बोझिल नहीं करता बल्कि साधारण जन द्वारा बोली जाने वाली शब्दावली के अतिरिक्त गंभीर एवं मानस पटल पर अविचल प्रभाव डालने वाले शब्दों का विधान भी आपने अपनी कविताओं में किया है। आपकी कविताओं का शीर्षक भी उर्दू के शब्दों पर मिलता है जैसे - 'चांद आकाश गाता है' में 'ख़फ़ा सब वक्त', 'ख़याल गर वह'; 'मुरझाने को खिलाते हुए' में 'फ़र्क-एक, दो, तीन', 'ख़ुद वक्त है वह', 'ख़लिश क्यों है'; 'आकाश भटका हुआ' संग्रह में 'होशे-ख़ला', 'फ़रेब', 'ख़याल हक़ है', 'पता ज्यादा ज़रूरी है' आदि।

'ख़याल हक़ है' कविता में लिखा है -

"कुछ भी नहीं बचे चाहे/बच रहेगा एक सूनापन/मेरे ख़यालों में गुम/गुम रहता हूँ मैं

ख़याल में तुम्हारे जैसे/ख़याल हक़ है

सूने हो कर भी/तुम हक़ हो-

मेरा ख़याल जो हो /हक हूँ मैं

तुम्हारे सूने में /रमता ख़याल हूँ जो [6]।"

माधव हाड़ा ने आचार्यजी के काव्य संसार की भाषिक कसावट के संबंध में लिखा है कि- "एकान्विती और आद्यन्त सुगठन के कारण ही श्री आचार्य की प्रत्येक कविता एक इकाई है जिसमें से कोई उद्धरण निकाल लेना बहुत कठिन है।... कविता में प्रायः अभिप्रेत अर्थ से भिन्न किन्हीं अन्य अर्थ-छवियों की संभावनाएँ बहुत बनती है [7]।"

पृथ्वी को बचाने की फ़िक्र को आचार्य जी ने अपनी कविता 'कैसे बचेगी' में मानवीय रिश्तों एवं जलते मानवीय मूल्यों की ओर संकेत करते हुए लिखा है कि – "कभी तुम बचा लाये थे/पृथ्वी को

डुबा दी गयी थी/गहरे समुद्र में जो/

पर अब इस आग से/कैसे बचेगी वो/

जला कर ख़ुद को/तुम ने लगाई है जो।

(30 अप्रेल, 2016) [8]"

2.3. उर्दू के शेर, महाभारत के श्लोक एवं कविता को संदर्भ में देते हुए कविता लिखना - 'हाज़िर जवाबी शैली'

समकालीन कविता के कुछ कवियों द्वारा इस विशिष्ट शैली का प्रयोग किया जा रहा है। अशोक वाजपेयी, नंदकिशोर आचार्य आदि को इस शैली का पुरोधा कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। आपकी कविताओं में उर्दू के शायरों में ग़ालिब, मीर तकी मीर, मौलाना रूम आदि के शेरों को आधार बनाकर कविता लिखने का कार्य किया गया है। मीर तकी अमीर के शेर- 'इश्क इक 'मीर' भारी पत्थर हैं/कब वह तुझ नातवाँ से उठता है'। पर आचार्य जी द्वारा लिखी गई कविता 'ढ़ोते फिर रहे हैं' मैं लिखा है कि -

"कहा था/'मीर' साहब ने/न मैं माना

न तुम माने/और अब देखो

उठाने की कोशिश में इसे/ख़ुद ज़िन्दगी को

कर लिया पत्थर/ढ़ोते फिर रहे हैं

हम दोनों ही जिसे [9]।"

इसी प्रकार महाभारत के आदि पर्व के एक श्लोक 'कालः सृजति भूतानि कालः संहति प्रजा।/संहरन्ते प्रजारू कालं कालः शमयते पुनः।।' को उद्धृत करते हुए आचार्य जी ने 'काल' नामक कविता में लिखा है कि -

"बीता जाता है काल/क्या बीत रहा है दिक् भी उस के साथ/उसी का आयाम तो है वह/काल क्या मारेगा मुझ को/मुझ से ही जाना है वह/मेरे साथ ही मरना होगा उस को

लेकिन दिक् में ही हूँ यदि -

मरूँगा कैसे ! (9 अप्रैल 2014) [10]"

2.4. कविता में सांकेतिकता का महत्त्व

कविता में शब्दों के अतिरिक्त जो कुछ कवि द्वारा रखा या लिखा जाता है वही कविता का अपना स्वरूप होता है। अपने समय के कवियों में इस विशेषता को आधार बनाते हुए अनेक कविताएँ लिखी गई है। 'उड़ना संभव करता आकाश' नामक कविता संग्रह में 'नीरवता', 'अर्थोत्तर' नामक कविता में यह विशेषता देखने को मिलती है। 'नीरवता' नामक कविता में लिखा है कि -

"नीरवता नहीं होती है शब्दों में-/बीच की नीरवता में/होती हैं कविता/नीरवता ! यह क्या है/शब्द ने सोचा/जानना चाहिए इस को-/चुपके- से उतर गया/उस में !/अब चक्कर खा रहा है/अनवरत/ज्यों शून्य में अस्तित्व/छटपटाता हुआ/बिखर न जायें स्वर-व्यंजन/कंठ हैं अवरूद्ध -

मदद के लिए/अब किस को पुकारें ? कैसे ? (23 अप्रैल 2008) [11]"

'अर्थोत्तर' कविता में लिखा है कि: -

"निरर्थक नहीं है वह शब्द/अर्थ के पार है जो
उसी की गूंज है/मेरी सारी भाषा/जिस में डूब कर
मैं/पाता हूँ कविता/कविता कुछ कहना
नहीं/पाना है/गुज़र कर अर्थों की सरगम
से/अर्थोत्तर हो जाना है। (31 अगस्त, 2008)
[12]"

2.5. परसर्गों का शब्दों से अलग प्रयोग

सामान्यतः कवियों द्वारा परसर्ग को शब्द के साथ जोड़कर लिखा जाता है लेकिन आचार्यजी ने अपनी कविताओं, आलोचनाओं, लेखों इत्यादि में इन परसर्गों का अलग से प्रयोग किया गया है। अर्थात् शिरोरेखा में अलग से परसर्गों का लेखन कार्य पाया गया है। जैसे- जिस में, इस लिए, किस को, उस को, उस की, मुझ को, मुझ में, जिस में, जिस का आदि शब्दों का रूप-विधान इनकी प्रयोगशीलता को प्रदर्शित करता है। जैसे इनकी 'भस्मारती' कविता में लिखा है कि-

"एक दुनिया/जल-जल कर/भस्म हो गयी
है/उस के अंदर/उसी भस्म से/करता वह
अभिषेक/स्वयं- का-/महाकाल हो जाता/उस को
मल-मल कर। (12 दिसम्बर, 2007) [13]"

2.6. शाब्दिक प्रयोग में सचेतनता

शब्दों का किस प्रकार एवं संदर्भ के अनुसार प्रयोग हो की उससे भावों की समुचित अनुभूति सहृदय पाठक को करवाई जाए यह आचार्यजी को विशेष प्रिय रहा क्योंकि शब्द ही वह रुप है जिससे कवि या रचनाकार अपने समाज, राष्ट्र इत्यादि के प्रति अपने उत्तरदायित्वों का निर्वहन करता है। क्योंकि बिना शब्दों के अभिव्यक्ति संभव शायद उस रूप में नहीं हो सकती है जिसकी अपेक्षा होती है। बिना शब्द के की गई अभिव्यक्ति 'गूंगे के गुड़ के समान' होती है। अज्ञेयजी के साथ रहने के कारण शब्दों को किस रूप में प्रयुक्त किया जाना चाहिए इसे ये बख़ूबी जानते हैं इसलिए उन्होंने अपनी कविता 'हो जाता है कविता' में लिखा है कि-

"शब्द आँखें हैं/जिन से मैं देखता हूँ तुम्हें
शब्द कान हैं/जिन से तुम को सुनता हूँ मैं
शब्द हाथ हैं/छूता हूँ तुम को मैं जिन से
शब्द ओंठ हैं/जिन से तुम्हें चूमता हूँ मैं
शब्द देह हैं/गहता हूँ तुम को मैं जिन पर
शब्द खोज हैं/जिन में तुम्हें खोजता हूँ मैं
-तुम जो आप शब्द हो
अपना प्रतिरूप खोजता हुआ
शब्द में करता शब्द प्रवेश
और हो जाता है कविता।
(29मई,2008) [14]"

2.7. प्रयोगधर्मिता

प्रयोगधर्मिता नंदकिशोर आचार्य की काव्य में भाव एवं भाषा दोनों ही स्तरों पर पाई जाती है। इन्होंने इतिहास

के कथानक को आधार जरूर बनाया है लेकिन उन कथानकों द्वारा युगानुरूप परिस्थितियों को साकार करने का कार्य भी हुआ है। ये कथानक उन रूढ़ स्थितियों को ही प्रकट नहीं करते अपितु देश-काल एवं ऐतिहासिक संदर्भ के साथ-साथ समकालीन परिवेश की विभिन्न परिस्थितियों को भी साकार करते रहे हैं जो इनकी प्रयोगधर्मिता का प्रमाण है। चाहे प्रगतिशीलता की बात प्रेम, ऐतिहासिकता, स्वातंत्र्योत्तर कालीन परिस्थितियों में बदलाव, समसामयिक पृष्ठभूमि आदि को अपने अंतःकरण में प्रश्रय देते हुए उन्हें संवेदना के धरातल पर साकार करने का कार्य इनकी कविताओं में देखने को मिलता है। चाहे उस में मृत्यु का संदर्भ हो या अकाल की परिस्थिति में जनसामान्य की संघर्षशीलता हो या व्यक्ति के मन में पाए जाने वाले दुखों, अवसादों, तनाव, संघर्षशीलता, अंतर्द्वंद आदि को प्रकट करने का कार्य इनकी कविताएँ करती रही हैं। प्रेम की वियोगावस्था को आधार बनाते हुए अपनी कविता 'एक और प्रकार' मैं लिखा है कि -

"एक संताप है तुम्हारा/वर्तमान
कारण उस अतीत के/जो कि मैं हूँ
और जिस की वजह से
मैं सरापा आत्मग्लानि हो गया हूँ
यह भी क्या नहीं है लेकिन
प्यार का ही/एक और प्रकर ! (1998) [15]"

'अर्थ प्रेम का' नामक कविता में प्रेम के अदृश्य रूप का चित्रण करते हुए लिखे हैं कि -

"किसी शब्दकोश ने नहीं बताया/अर्थ प्रेम का/
जिस से भी पूछा - /कर दिया इंगित तुम्हारी ओर
पूछा जब तुम से/गुमसुम बैठी तुम
खिलखिलाती हुई हो गयी हो/गुम
कहीं जिज्ञासा में मेरी। (7 जून, 2012) [16]"

2.8. मन के अंध गह्वर में प्रवेश

मनुष्य का मन उसे प्रत्येक कार्य करने के लिए या तो प्रेरित करता है या अंतःकरण की स्वतः स्फूर्थ ध्वनि उसे कार्य करने के लिए निरंतर प्रेरित करती रहती है। मन, हृदय और बुद्धि का समुचित समागन होने पर ही व्यक्ति का व्यक्तित्व पूरी तरह उभर पाता है। अगर मन कमजोर हो गया और उसने बुद्धि का साथ नहीं दिया तो वह व्यक्ति अपने जीवन में समुचित विकास नहीं कर पाता है। मनुष्य के मन में पाए जाने वाले अन्ध गह्वर में प्रवेश करने का कार्य नंदकिशोर आचार्य का काव्य करता है। इसके पूर्व अज्ञेय द्वारा इस क्षेत्र में प्रवेश कर मन की कल्मशता को दूर करने संबंधी काव्य लिखा गया। आचार्यजी द्वारा लिखित कविता 'अंधियारे अतल में कहीं' में मनुष्य के मन में पाई जाने वाली मनःस्थिति को अनुभव करते हुए लिखा है कि -

"वे जायें/अंधेरे से प्रकाश की ओर

जिन्हें करना है अपने को/उजागर

मैं जो/सो जाना चाहता हूँ

तुम्हारे मन के/अंधियारे अतल में कहीं-

प्रकाश की क्यों तलाश हो मुझे

तुम से विलग जो कर दे।

(30अक्टूम्बर, 2009) [17]"

2.9. ईश्वर एवं मृत्यु से टकराहट का चित्रण या अद्वेत दर्शन

सामान्यतः कवियों द्वारा जीवन जीने के लिए संघर्षरत व्यक्तियों का चित्रण किया जाता है जो कहीं आर्थिक रूप में तो कहीं सामाजिक रूप में, कहीं राजनैतिक रूप में चित्रित मिलता है लेकिन आचार्यजी के काव्य में मृत्यु से टकराहट, मृत्यु के वज़ूद को मनुष्य की आत्मा में निवास स्थान मिलने पर ही वह अपने रूप को ग्रहण कर पाती हैं नहीं तो मृत्यु को कौन जान पाएगा, मनुष्य के बिना मृत्यु की कल्पना भी कौन करेगा एसे विचार मिलते हैं । जीवन है तभी मृत्यु का महत्त्व होगा नहीं तो मृत्यु का क्या औचित्य है? आत्म तत्व के बिना मृत्यु का कोई सरोकार नहीं है इसलिए आचार्य जी की अनेक कविताओं में मृत्यु से टकराहट, मृत्यु के पार जाकर देखने की क्रियाओं का अनुभव किया जा सकता है। 'खेल' नामक कविता में ईश्वर की मृत्यु एवं कवि द्वारा उसके साथ खेल खेलने का चित्रण करके उत्तर-आधुनिकतावादी दृष्टिकोण को आधार बनाते हुए लिखा है कि -

"खेल खेलता है मृत्यु के साथ/ईश्वर

खेल खेलती है/ईश्वर के साथ मृत्यु भी

दोनों का मोहरा पर मैं हूँ/सौंप कर मुझे मृत्यु को

बचाता है ख़ुद को/ईश्वर-/ईश्वर को मार देती है

मार कर मृत्यु मुझ को/कभी ईश्वर होता हूँ/मैं

मृत्यु कभी उस की-/मैं भी खेलता हूँ खेल।।

(10 जून 2009) [18]"

उपर्युक्त भाषिक एवं साहित्यिक विशेषताओं के अतिरिक्त इनकी कविताओं में अद्वेत दर्शन, अस्तित्ववादी दर्शन, मनुष्य मात्र के अधिकारों के लिए जागरूकता एवं सजगता, मानव मात्र के कल्याण के लिए निरंतर प्रयासरत रहने की प्रेरणा इत्यादि का अनुभूति के विविध रूपों में चित्रण मिलता है। प्रकृति का चित्रण इनका प्रथम आकर्षण रहा जिसमें विशेष रुप से रेगिस्तान के प्रति अनुराग, लोक संस्कृति के प्रति उत्तरदायित्व की भावना, मनुष्य मात्र के कल्याण के लिए जन जागृति जाग्रत करना, ऐतिहासिक तत्त्वों में भी नवीन प्रयोग करते हुए विविध भावानुभूतियों का चित्रण इनके काव्य संग्रहों में प्राप्त होता है जो इन्हें अपने तरीके का कवि कहने के लिए ठोस आधार प्रदान करता है। आचार्य को 'आत्म रव....! का अद्वितीय कवि' कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं

होगी जो जड़ व चेतन में पाई जाने वाली संवेदनाओं को साकार करने के साथ-साथ इनकी भाषा निरन्तर भाषिक सिद्धि की ओर अग्रसर होती हुई अनुभव होती है।

संदर्भ सूची

[1] दैनिक भास्कर, उदयपुर संस्करण, शनिवार, 28 जनवरी 2017, पृष्ठ 10

[2] कृष्णदत्त पालीवाल(सं.),आधुनिक संवेदना और संप्रेषण, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010, पृष्ठ 175

[3] नंदकिशोर आचार्य, रेत-राग, वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर, 2002, सम्मतियों से

[4] नंदकिशोर आचार्य, रेत-राग, वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर, 2002, पृष्ठ 29

[5] यतींद्र मिश्र, अनुभव के आंतरिक विमर्श का उत्सव, मधुमती, जुलाई-अगस्त, 2000, पृष्ठ 122

[6] नंदकिशोर आचार्य,आकाश भटका हुआ, वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर, वर्ष 2015, पृष्ठ 40

[7] माधव हाड़ा,तनी हुई रस्सी पर (अध्यात्म, प्रेम और प्रकृति की कविता), संघी प्रकाशन, जयपुर, 1987, पृष्ठ 37

[8] नंदकिशोर आचार्य, हवा की मंज़िल नहीं कोई, सूर्य प्रकाशन मंदिर, बीकानेर, 2016, पृष्ठ 34

[9] नंदकिशोर आचार्य, आकाश भटका हुआ, वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर, 2015, पृष्ठ 35

[10] नंदकिशोर आचार्य, मुरझाने को खिलाते हुए, सूर्य प्रकाशन मंदिर, बीकानेर, 2014, पृष्ठ 110

[11] नंदकिशोर आचार्य, उड़ना संभव करता आकाश, सूर्य प्रकाशन मंदिर, बीकानेर 2009, पृष्ठ 94

[12] नंदकिशोर आचार्य,उड़ना संभव करता आकाश, सूर्य प्रकाशन मंदिर, बीकानेर 2009, पृष्ठ 104

[13] नंदकिशोर आचार्य, चाँद आकाश गाता है, वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर, 2008, पृष्ठ 20

[14] नंदकिशोर आचार्य, चाँद आकाश गाता है, वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर, 2008, पृष्ठ 60

[15] नंदकिशोर आचार्य, अन्य होते हुए, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2007, पृष्ठ 23

[16] नंदकिशोर आचार्य, छीलते हुए अपने को, वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर, 2013, पृष्ठ 32

[17] नंदकिशोर आचार्य, इतनी शक्तों में अदृश्य, सूर्य प्रकाशन मंदिर, बीकानेर, 2012, पृष्ठ 14

[18] नंदकिशोर आचार्य, केवल एक पत्ती ने, वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर, 2011, पृष्ठ77